मृणाल पांडे के साहित्य में जीवन–दर्शन

हिन्दी में पीएच.डी उपाधि हेतु
शोध प्रस्तावना

शोध निर्देशिका
JV'n डॉ. निरूपमा हर्षवर्धन

शोधार्थी :
JV'n प्रिंयका
ENROLLEMENT NO. JVR-II/16/8036

मानविकी एवं समाज विज्ञान विभाग
प्रबंधन एवं मानविकी संकाय
ज्योति विद्यपीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, भारत
जनवरी 2017

प्रपत्र शोध कार्य

(1) शोध विषय का परिचय :

जीवन–दर्शन :

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम जीवंत संस्कृति है। इसी संस्कृति ने भारत ही नहीं, वरन् विश्व को जीवन जीने की कला सिखाई है। इसी जीवन–दर्शन ने मानव को उन्नति की राहें दिखलाई हैं।

जब मनुष्य समाज में उत्पन्न हुआ तभी उसका अस्तित्व सामाजिक हो गया अर्थात् वह तभी से सामाजिक प्राणी माना जाने लगा। समाज के बिना मनुष्य अस्तित्वहीन है। अरस्तु ने भी इस संदर्भ में कहा है कि वह मनुष्य जो समाज में नहीं रह सकता या जिसकी अपनी कोई आवश्यकता नहीं है वह स्वयं में पूर्ण है। वह अवश्य ही या तो पशु है या फिर देवता/ समाज का अध्ययन मुख्यतः दो दृष्टिकोणों के माध्यम से किया जाता है–वैज्ञानिक और दार्शनिक। जब समाज का अध्ययन दार्शनिक दृष्टिकोण से किया जाए तो 'समाज–दर्शन' अस्तित्व में आता है। समाज दर्शन वस्तुतः दर्शन शास्त्र की ही एक शाखा है। दर्शन शास्त्र जहाँ जीवन जगत के पूरे स्वरूप को तार्किकता के आधार पर समझने का सार्थक प्रयास करता है वहीं समाज–दर्शन भी मानव जाति के सामाजिक संगठनों में मानवीय योगदान के महत्त्व का सूक्ष्मता से अंकन करता है। वस्तुतः समाज–दर्शन समाज के मौलिक सामान्य प्रश्नों का अध्ययन है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि समाज दर्शन सामाजिक मूल्यों और सामाजिक तथ्यों की समीक्षा तथा परीक्षा करता है।

वस्तुतः विश्व की सर्वाधिक प्रचलित और प्राचीनतम संस्कृति भारतीय संस्कृति ही है। जीवन का मर्म बौद्ध, जैन और चार्वाक् आदि दर्शनों के माध्यम से समझा जा सकता है। समाज का जब दार्शनिक दृष्टि से अध्ययन किया जाता है

तो उसमें न केवल समाज बल्कि उससे जुड़े मनुष्य और सामाजिक संगठनों का भी अध्ययन इसी दार्शनिकता के सम्बन्ध में किया जा सकता है।

जीवन : अर्थ, परिभाषा :

जीवन शब्द 'जीव' शब्द के साथ 'ल्युट' प्रत्यय लगाने से बना है। इसका अर्थ है जीवनम् अर्थात् जिन्दा रहना। इसे जन्म से मृत्यु तक का समय अथवा जिंदगी भी कहा जाता है।[1]

हिन्दी विद्वानों के अनुसार–'जीवन वह नैसर्गिक शक्ति है जो प्राणियों, वृक्षों आदि की अंगों, उपांगों से युक्त करके सक्रिय और सचेष्ट बनाती है और जिसके पफलस्वरूप वे अपना भरण–पोषण करते हुए अपने वंश की वृद्धि करते हैं। आत्मा या प्राणों से पिण्ड या शरीर से युक्त रहने की दशा या भाव, जान अथवा प्राण आदि को ही 'जीवन' का नाम दिया गया है।

'जीवन' शब्द नितान्त व्यापक है, अतः यह अवर्णनीय है। इसके समस्त अवयवों एवं अनुभवों का शब्दों में वर्णन एवं इसको समझने का प्रयत्न किया जा सकता है। जब तक भौतिक तत्त्वों से बने हुए पिण्ड में चेतना या आत्मा रहती है वह विभिन्न क्रियाकलाप करता है। इसीलिए साधारण तौर पर 'जीवन' शब्द का प्रयोग जीवधारियों के अनुभवों, गतिशीलता और क्रिया कलापों के लिए किया जाता है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि जीवन और पर्यावरण के बीच क्रिया–प्रतिक्रिया का ही दूसरा नाम जीवन है। जीवन में गतिमयता एवं चेतना का होना आवश्यक है। आधुनिक विज्ञान मानता है कि जीवन का अस्तित्व, चेतनत्व प्राणत्व और सजीवत्व में निहित है। जीवन ऐसी क्रियाशीलता है, जो समस्त जीव–जन्तुओं, पेड़–पौधों और मानव जाति में पाई जाती हैं। जीवन के पाँच लक्षण माने गए हैं–गतिशीलता, अनुभूति या संवेदना, आत्मवर्धन, आत्मपोषण और प्रजनन। जब तक भौतिक तत्त्वों से बने हुए पिण्ड या शरीर में आत्मा या प्राण रहते हैं, तब तक वह चेतन और जीवित रहता है। इसकी विपरीत दिशा में वह नष्ट हो जाता

है। जिन पदार्थों में आत्मा या प्राण होते ही नहीं, वे अचेतन और निर्जीव कहलाते हैं। यह दशा जड़ता अथवा मृत्यु की दशा है। इसमें शरीर के साथ प्राणों का आधार रहता है। इसी तरह इसे जीवित रहने का भाव अथवा जीने का व्यापार भी कहा जाता है। वास्तव में 'जीवन' एक ऐसा शब्द है जिसे समझने का प्रयत्न किया जा सकता है, परन्तु जिस तरह अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति कठिन है, वैसे ही जीवन को समझ पाना इतना सरल नहीं है।

वृहत हिंदी कोश के अनुसार– 'जीवन' शब्द का अर्थ है जीता रहना, प्राण धारण करना, जीवित दशा, जिंदगी, जीवन की आधार रूप वस्तु।'[2]

समय तथा समाज के परिवर्तन के साथ–साथ 'जीवन' शब्द का अर्थ भी बदलता रहता है। प्रारंभ में 'जीवन' को मात्रा अस्तित्व समझा जाता था। मनुष्य के सांस्कृतिक विकास के लिए साथ–साथ जीवन का क्षेत्रा भी विस्तृत होता गया। विद्वानों ने मानव को जैवीय, दार्शनिक जीव मानकर जीवन की परिभाषा दी है।

वस्तुतः जीवन स्वयं में एक विशद् विषय है। चिरकाल से इसके विषय में दार्शनिकों, कलाकारों, आचार्यों, वैज्ञानिकों एवं साहित्यकारों ने अपने–अपने दृष्टिकोण से विचार किया है। डॉ॰ देवराज उपाध्याय ने जीवन की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'जीवन' बहुत ही गूढ़ है। मनुष्य के सारे कार्य व्यापार और व्यवहार उसके रहस्योद्‌घाटन के लिए होते हैं। चाहे संगीत के द्वारा ताल और स्वर से समझे या ज्यामिति की रेखाओं के द्वारा दर्शन के बड़े–बड़े सिद्धान्तों के अध्ययन से, चाहे उपन्यासों की कथाओं के द्वारा सबके मूल में यही प्रवृत्ति काम कर रही है।'[3]

वास्तव में 'जीवन' शब्द अर्थ की दृष्टि से व्यापक है। यह सम्पूर्ण वैश्विक जीवन का पर्याय है। इसकी सीमा में लोक और परलोक मानव और प्रकृति, चेतन और अचेतन सभी समाहित हैं। इन सबमें मानव जीवन की परिधि निश्चय ही सर्वाधिक व्यापक है, क्योंकि मानव ने अपनी बौद्धिक शक्ति से अपने

जीवन को अधिक प्रसारशील बनाकर विश्वव्यापी बना दिया है और जीवन का यह व्यापक रूप अपनी विविधता के कारण समस्त मानवेत्तर प्राणियों के जीवन से तो सम्बन्धित ही हो गया है। साथ ही यह सृष्टि के अनेक पदार्थों को अपने अन्तर्गत समाविष्ट किए हुए है।

जीवन की सार्थकता व निरर्थकता की दृष्टि से विद्वानों और चिन्तकों ने इसे चिन्तन का विषय बना लिया है। 'वह क्या है' से ऊपर 'क्या होना चाहिए' ही उसके चिन्तन का आधार है और इस दृष्टि से जीवन का तात्पर्य मानव जीवन के कार्य–कलाप, चिन्तन, विकास, अन्तर्द्वन्द्व, मनोविज्ञान और अन्तर्दृष्टि तथा बाह्य दृष्टि से है। जीवन की सार्थकता गति परिवर्तन के अनवरत चक्र से युक्त है। यह गतिशीलता ही विश्व जीवन के विकास का मूलाधार है। जीवन एक निरन्तर प्रवाह है। इसीलिए यह सदा एक–सा नहीं रहता। अवस्थाओं और दशाओं का परिवर्तन तो इसमें होता ही है किन्तु ज्ञान और विचारों का भी परिवर्तन हुआ करता है।

पाश्चात्य विद्वानों का मानना है कि सार्थक जीवन ही वास्तविक जीवन है। सार्थकता के अभाव में जीवन–मृत्यु के समान है। पाश्चात्य विद्वान 'गाथा' का कथन इस उक्ति के बारे में अवलोकनीय है। जिसके अनुसार सार्थक जीवन ही सच्चे अर्थों में 'जीवन' कहलाता है। उनके अनुसार–निरर्थक जीवन मृत्यु से श्रेष्ठ नहीं है।[4]

जीवन भूत, वर्तमान एवं भविष्य का समन्वित रूप है। यह जिन्दा रहने की अनुभूति और जीवन्तता का भाव है। इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने जीवन को अलग–अलग प्रकार से व्याख्यायित किया है, क्योंकि व्यक्ति विशेष का जीवन दर्शन उसके स्वभाव एवं विचार के आधार पर निर्मित होता है। उसके स्वभाव और विचार अपने किसी अनुभवों पर ही बनते एवं बिगड़ते हैं। किन्तु इसके साथ ही कुछ अन्य तत्त्व भी होते हैं। जो उसके जीवन के महत्त्वपूर्ण विधायक तत्त्व सिद्ध होते हैं। इन तत्त्वों में सर्वाधिक उस व्यक्ति विशेष के 'जन्म से मृत्यु तक' के

वातावरण, उसके पूर्व संस्कार, शिक्षा तथा वंश जाति और वर्ग के संस्कार, धर्म तथा देश की संस्कृति का स्थान आता है।

इन्हीं सब तत्त्वों के आधार पर चिन्तक, विचारक एवं विद्वान जीवन की परिभाषा देते हैं। ये अपनी अनुभूति का संकेत दे पाते हैं। 'जीवन' को पूरा समेट नहीं पाते। पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि मानव जीवन किसी निश्चित परिधि के अन्तर्गत निहित है। जीवन वास्तव में सुख एवं दुःख का मिश्रण है। जीवन उसी को कहते हैं, जिसमें किसी भी प्रकार की गति एवं परिवर्तन विद्यमान हो। जन्म–मरण ही जीवन का प्रारम्भिक स्रोत है। जीवन एक ऐसी सच्चाई है जिसको न आने से रोका जा सकता न जाने से।

दर्शन : अर्थ :

'दर्शन' शब्द की उत्पत्ति 'दृश' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है देखना, निरीक्षण करना। इसके साथ कारणवाचक प्रत्यय 'ल्युट' का योग होने के कारण इसका अर्थ 'जिसके द्वारा देखा जाए' भी लिया जा सकता है।[5] किन्तु शब्दकोश के अनुसार 'दर्शन' सामान्यतः चाक्षुष या प्रत्यय साक्षात्कार का ही सूचक माना जाता है।

हिन्दी में दर्शन का विशिष्ट प्रयोग एक विशेष विषय या शास्त्र के अर्थ में भी होता है। उस स्थिति में उसका अर्थ एक ऐसे शास्त्र के रूप में ग्रहण किया जाता है जिससे आत्मा, अनात्मा, जीव, ब्रह्म, प्रकृति, पुरुष, जगत्, धर्म, मोक्ष, मानव जीवन के उद्देश्य आदि का निरुपण हो। दूसरे शब्दों में इसे तत्त्वज्ञान सम्बन्धी शास्त्र भी कहा जा सकता है।[6] अंग्रेजी के 'फिलोसफी' शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार अर्थ है–ज्ञान के प्रति अनुराग।[7]

'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' के अनुसार जिसके द्वारा देखा जाए, वही दर्शन है। वृहत् हिन्दी कोश के अनुसार–'चाक्षुष प्रत्यक्ष, साक्षात्कार, जानना। वह

साक्षात्कार जिसमें आत्मा, अनात्मा, जीव, ब्रह्म, प्रकृति पुरुष, जगत्, मोक्ष, मानव–जीवन के उद्देश्य आदि का निरुपण हो, तत्त्व ज्ञान कराने वाला शास्त्रा बुद्धि आदि दर्शन है।[8] साधारणतयः दर्शन से तात्पर्य आलोचनात्मक व्याख्याओं, तार्किक, सर्वेक्षणों अथवा दार्शनिक पद्धतियों से भी होता है।[9]

नारदीय सूक्त के ऋषि को विश्व की उत्पत्ति कब? कैसे? और क्यों हुई? यह प्रश्न पहेली के रूप में व्यथित करता था। जगत् का मूल तत्त्व क्या है, किस वस्तु की उत्पत्ति सर्वप्रथम हुई? आदि प्रश्नों से घिरे उनके मस्तिष्क में एक दिन यह घोषणा कर दी कि सृष्टि के आदिकाल में सिवाय परब्रह्म के अन्य कुछ भी नहीं था। यहीं से दर्शन की उत्पत्ति हुई। कुछ भारतीय विचारकों के अनुसार दर्शन का उद्भव दुःख से होता है। अपने दुःख से पीड़ित मानव के मन में, क्यों, कैसे, कब, कहाँ इत्यादि विचार जन्म लेते हैं। वह अपने दुःखों के निवारण हेतु, दुखों का कारण और उपाय सोचता है।

डॉ॰ राधाकृष्ण के अनुसार–'दर्शन एक ऐसा शब्द है जो सुविधाजनक रूप से स्वयं में संदिग्ध है–दार्शनिक विधि से दर्शन का तात्पर्य अन्तर्ज्ञान का प्रमाण मांगना है और उसका तार्किक रूप से प्रचार करना है–दर्शन एक आध्यात्मिक ज्ञान है, जो आत्मा रूपी इन्द्रि के समक्ष सम्पूर्ण रूप में प्रकट होता है।[9]

दर्शन के महत्त्व का उल्लेख मानक वर्ग के लिए हितकारी है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, जिसे अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए निरन्तर विरोधी तत्त्वों से संघर्ष करना पड़ता है। ऐसे संघर्षमय वातावरण में यदि मानव संस्कारविहीन व्यवहार करें तो उसमें और पशु में कोई अंतर नहीं रह जाएगा। अतः मनुष्य अपनी आत्मा में निहित संस्कारों को अपनी विवेकशक्ति द्वारा जो कि उसका दर्शन है, अक्षुण्ण बनाए रखने में समर्थ हो सकता है। अतः स्पष्ट है कि भारतीय मानसिक परिवेश के लिए जीवन दर्शन का अपना महत्त्व है। प्राचीन साहित्य व नए साहित्य में वर्णित जीवन दर्शन में पाठक अपनी समस्याओं के

समाधान खोजकर स्वयं के लिए राह निर्धारित करता है।

दर्शन का संबंध प्रत्यक्ष से अथवा देखने से है। यह वह तात्विक ज्ञान है, जिसमें पुरुष, जगत्, धर्म, मोक्ष, जीवन जीने के सभी उद्देश्य समाहित हो जाते हैं। दर्शन वस्तुतः मानव को सांसारिक बन्धनों से मुक्त करने की ओर अग्रसर करता है, अर्थात् दर्शन पारलौकिक उन्नति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है। इसी दर्शन के द्वारा हम मनुष्य चरम मूल्यों की प्राप्ति कर सकता है।

पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार दर्शन इस सृष्टि की उत्पत्ति के मूल कारणों की खोज का सशक्त साधन है। वह इस भौतिक जगत में विद्यमान सभी वस्तुओं की सत्यता सिद्ध करने का प्रामाणिक शास्त्र है। यही वह शाखा है जो मानवीय लक्ष्यों की चरम पराकाष्ठा को अद्भुत करता है और उन्हें पूर्णता की ओर अग्रसर करता है।

जीवन–दर्शन :

'जीवन और दर्शन' के अर्थ और परिभाषाओं के उपरांत 'जीवन–दर्शन' की सम्यक् और व्यावहारिक परिभाषा देना समीचीन हो जाता है। डॉ॰ आदर्श सक्सेना 'जीवन दर्शन' को जीवन सम्बन्धी सार्थक दृष्टिकोण मानते हुए लिखते हैं कि इस अर्थ में जीवन दर्शन या कलाकार का जीवन दर्शन एक विशिष्ट सत्य की ओर संकेत करता है। वह सत्य है, कलाकार ने जीवन को कैसा पाया, उसने जीवन के संबंध में क्या धरणा बनाई और जीवन को वह कैसे समझता है। संक्षेप में जीवन–दर्शन कलाकार की जीवन की आलोचना होती है।[10]

बाबू गुलाबराय जीवन–दर्शन को जीवन के प्रति एक विशेष दृष्टिकोण मानते हुए कहते हैं कि लेखक का जीवन के प्रति एक विशेष दृष्टिकोण होता है। उसी दृष्टिकोण से वह जीवन की व्याख्या प्रस्तुत करता है और उसी अनुकूल उसके विचार आते हैं।[11]

डॉ॰ लक्ष्मीकांत सिन्हा के मत में साहित्यकार इसी जीवन दर्शन के

सहारे अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त करता है। डॉ॰ सिन्हा इसी को लक्ष्य कर लिखते हैं कि उपन्यास में उपन्यासकार अपने नैतिक मूल्यों से पात्र और घटनाओं को तोलता है, उसका अपना जीवन–दर्शन उससे दृष्टि लेता है।[12]

डॉ॰ पारसनाथ मिश्र इस सन्दर्भ में लिखते हैं कि जीवन और जगत् के प्रति विशिष्ट दृष्टिकोण ही उपन्यासकार के जीवन–दर्शन के अंग रूप में उपन्यासों में अभिव्यक्ति पाते हैं।1[3]

आज का युग बौद्धिक परिवेश का युग है। अनुकूल जीवन–दर्शन का अपना महत्त्व है। मनुष्य की बुद्धि मनुष्य को कार्यरत रहने की प्रेरणा देती है और संसार की प्रत्येक वस्तुत के प्रति व्यक्ति का दृष्टिकोण भी निर्धारित करती है।

मानव–मन के भाव–विचार, सोच, ज्ञान, कल्पना सुखद भविष्य की आशा कार्यरत व्यक्ति को कर्मशील करने में सहयोगी होती है। किसी मनुष्य की अपनी ओर अपने चारों तरफ व्याप्त संसार की समस्त वस्तुओं के प्रति कैसी सोच है, वह किसी वस्तु को किस नजरिए से देखता है परखता है? किस प्रकार व्यक्ति का संसार के प्रति निजी दृष्टिकोण व्यक्ति का जीवन–दर्शन कहलाता है। किसी व्यक्ति का जीवन–दर्शन कितना सटीक और समयानुकूल है, यह व्यक्ति के सोचने–विचारने की शक्ति पर निर्भर करता है।

मानव अपने स्वभाव के अनुकूल प्रत्येक वस्तु को जानने के लिए जिज्ञासु है। अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण ज्यों–ज्यों वह और अधिक ज्ञान अनुभव प्राप्त करता है, त्यों–त्यों उसका, जीवन–दर्शन भी परिवर्तित और सारांशतः विकसित होता चलता है। यह एक भ्रान्ति है कि कुछ विशेष व्यक्तियों अथवा महान व्यक्तियों का ही जीवन–दर्शन होता है। सत्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का चाहे वह विचारक हो अथवा विद्वान् हो, महान् हो अथवा सामान्य जीवन व्यतीत करने वाला, उसका अपना एक जीवन–दर्शन होता है। जीवन–दर्शन के प्रति एक बात प्रत्यक्ष दृष्टव्य है कि जो व्यक्ति जितना प्रतिभावान होगा, उसका जीवन–दर्शन

अधिक सशक्त एवं प्रभावशाली होगा।

युगपरक जीवन–दर्शन के अंतर्गत प्रमुखतः समाजवादी विचारधारा, मार्क्सवादी दर्शन, गांधी दर्शन, राजनीति, सामाजिक व्यवस्था आदि मानदण्डों को आधार बनाया जाता है। व्यक्तिपरक जीवन–दर्शन के अन्तर्गत युग–चेतना मानवता, आधुनिकता, शाश्वत जीवन–मूल्यों यौन–बोध, सौन्दर्य–बोध व मानव की विघटनकारी प्रवृत्तियों के अन्तर्गत संशय बोध या अपमान बोध आते हैं। संस्कृति परक जीवन–दर्शन के अंतर्गत आत्मा (जीव), परमात्मा (ईश्वर) धर्म और पुरुषार्थ आदि संबंधी विचार आते हैं। बदलते परिवेश के अनुकूल व्यक्ति के जीवन–दर्शन में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। इसीलिये जीवन–दर्शन को आकाश की भाँति स्थिर नहीं बल्कि जल की भाँति गतिशील और परिवर्तनशील माना गया है।

दर्शन और जीवन–दर्शन :

'दर्शन और जीवन–दर्शन' में परस्पर अन्तर होते हुए भी दोनों परस्पर पूरक है। दर्शन व्यापक है और जीवन–दर्शन व्यक्ति–जीवन की सीमाओं तक सीमित है। दर्शन शास्त्र में आत्मा, अनात्मा, जीव, ब्रह्म, प्रकृति, पुरुष, धर्म, मोक्ष, मनव जीवन के उद्देश्यों का निरुपण होता है। जीवन–दर्शन के अंतर्गत दर्शन के सिद्धान्तों का उल्लेख होता है। दर्शन और जीवन–दर्शन के परस्पर सम्बन्ध में एक बात उल्लेखनीय है कि जीवन–दर्शन के आधार में दर्शन ही विद्यमान है। किसी भी दर्शन का व्यक्ति पर पूर्ण प्रभाव पड़ता है इसीलिए व्यक्ति जिस दर्शन के अंतर्गत प्राचीन हिन्दू तथा अहिन्दू आस्तिक तथा नास्तिक सभी प्रकार के भारतीयों के दार्शनिक विचार आते हैं। सभी दर्शन–शास्त्राों के विचारों में कुछ साम्यता होते हुए भी अंतर है। व्यक्ति के दार्शनिक विचारों के अनुकूल उनका सर्वांगीण विकास यथा, नैतिक, सामाजिक, धार्मिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण का विकास होता है। व्यक्ति की विवेकशक्ति ही उसके संस्कारों को जीवित रखती है। यदि व्यक्ति की विवेकशक्ति उसके संस्कारों को संचालित न करें तो मानव व पशु

में भिन्नता ही क्या होगी। इसीलिए दर्शन को ही जीवन–दर्शन का आधार स्वीकार किया जाता है। यदि कोई दर्शन के सिद्धान्तों को अपने जीवन में शामिल न करें तो दर्शन की क्या उपयोगिता? दर्शन की महत्ता तो उसकी व्यावहारिकता में है, इसीलिए यदि दर्शन को जीवन–दर्शन का आधार स्वीकार करें तो जीवन–दर्शन के लिए एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है।

जीवन–दर्शन के नियामक तत्त्व :

दार्शनिक दृष्टि के निर्माण में निजी जीवनानुभव, अध्ययन, शिक्षा–दीक्षा परिवेश, संसर्ग–प्रभाव, विचारों के गाढ़े हल्के स्पर्श आदि विविध उपकरण उत्तरदायी होते हैं।[14]

इस कथन के आधार पर हम कह सकते हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज की अभिन्नतम इकाई है। अपने ज्ञान एवं अध्ययन के अतिरिक्त सामाजिक परिवेश एवं महान व्यक्तित्व का निर्माण करता है। ध्यान देने की बात यह है कि उक्त वर्णित उपकरणों में से कोई एक ही उपकरण जीवन–दर्शन का निर्माता नहीं कहला सकता वरन् सभी उपकरणों की सामूहिकता ही जीवन–दर्शन की निर्माता होती है। इनके अतिरिक्त परम्परा, युग चिंतन एवं लक्ष्य भी जीवन–दर्शन के नियामक तत्त्व है। इन नियामक तत्त्वों में आत्मबोध, दुःखनाश, आनंद प्राप्ति, सत्, असत् विश्व–बोध मौलिक व्यवस्था, स्वयं साध्यता, सामाजिक तथा आध्यात्मिक सुधार आते हैं, जिनका संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित पर्यालोचन इस प्रकार है–

1. आत्मबोध 2. दुःखनाश, 3. आनन्द प्राप्ति, 4. सत्–असत् की विवेचना 5. विश्व–बोध 6. मौलिक व्यवस्था 7. सामाजिक तथा आध्यात्मिक सुधार 8. सत्य संबंधी व्यापक दृष्टिकोण, 9. व्यावहारिक अनुशासन और पास्परिक सम्बन्ध स्थापन 10. एकता की खोज 11. ज्ञानों का समाहार।

1. **आत्मबोध :** सत्य के स्वरूप का निर्धारण करने के लिए दार्शनिक प्रयास या तो आध्यात्मिक रूप से प्रारंभ होता है या फिर वस्तुचिन्तन से। भारतवर्ष

में चिन्तन का आकर्षण केन्द्र मानवात्मा रहा है, जो वस्तुतः सर्वकेन्द्र है। 'आत्मानं विद्धि' अर्थात् आत्मा को जानो में भारतीय चिन्तन का सारांश निहित है।[15]

2. दुःखनाश : दर्शन का एक प्रयोजन दुःखनाश है। बौद्धमत का लक्ष्य ही दुःखनाश है। अपने धार्मिक जीवन के अनुभव से बुद्ध की चार आर्य सत्यों के विषयों में निश्चय हो गया अर्थात् यह कि दुःख विद्यमान है। इसका कारण भी विद्यमान है, कि इसे दूर किया जा सकता है और इसमें सपफलता प्राप्त करने का मार्ग भी है।[16]

3. आनन्द प्राप्ति : यह आत्मवादी वेदान्त का प्रतिपाद्य है। वेदान्त आशावादी दर्शन है। यह जीव को अखण्ड आत्मानंद की प्राप्ति का आश्वासन देता है। इस आनन्द का न तो कहीं बाहर से आगमन होता है न कहीं बाहर गमन होता है। यह सदैव आत्मा में विद्यमान रहता है। अज्ञान की निवृत्ति हो जाने पर वह हमें अनुभूत होता है इसका प्रतिपादन उपनिषदों में स्थल–स्थल पर किया जाता है। शैव मतों में इस धारणा का समर्थन बड़े मनोयोग से किया गया है।[17]

4. सत्–असत् की विवेचना : दर्शन की व्यावहारिक एवं पूर्ण महता जीवन निर्देशन में नहीं है। अपितु इस आशा में है कि वह सत्–असत् संबंधी प्रमुखतम् प्रश्न का उत्तर एक प्रश्न प्रणाली से देगा। हमारी समस्याओं का ऐसा समाधान देगा जो हमें सांत्वना व प्रोत्साहन दे सके।

5. विश्वबोध : अपने शुद्ध रूप में दर्शन का कार्य विश्व के सामान्य पक्षों को समझने में हमारी सहायता करना तर्कपूर्ण विश्लेषण करना है। यह मत प्रसिद्ध विद्वान रशेल का है। डॉ॰ अब्राहम ईडल का कथन है कि 'दर्शन' उस विश्व को जिसमें हम रहते हैं, एक शाश्वत तथा पूर्ण विवरण देने का प्रयास करता है।

6. मौलिक व्यवस्था : डॉ॰ अब्राहम ईडल का मत है कि विभिन्न दर्शनों तथा दार्शनिकों में से एक सर्वमान्य गुण यह प्राप्त होता है कि उनकी जिज्ञासा चिंतनपरक होती है। उनका लक्ष्य मौलिक व्यवस्था की खोज, उनका ज्ञान, उसका दर्शन होता है।

7. सामाजिक आध्यात्मिक सुधार : दर्शन के प्रतिष्ठाता देश के सामाजिक, आध्यात्मिक सुधार के प्रयत्न करता है। भारतीय सभ्यता को ब्राह्मण सभ्यता कहने का अभिप्राय यह है कि इसके प्रमुख लक्षणों तथा शीर्षस्थ उद्देश्यों की रूप रचना दार्शनिक चिन्तनों तथा धार्मिक मस्तिष्कों द्वारा हुई है। वस्तुतः ये सभी जन्मतः ब्राह्मण नहीं थे। प्लेटो का यह आदर्श कि दार्शनिकों को समाज का शासक तथा निर्देशक होना चाहिए। अन्तिम सत्य आत्मा में है जिसके प्रकाश में यथार्थ जीवन का परिष्कार होता है।[18]

8. सत्ता सम्बन्धी व्यापार निर्वैयक्तिक दृष्टिकोण : दार्शनिकों का यह आदर्श होना चाहिए कि वे सत्ता संबंधी प्रश्नों पर मुक्त बुद्धि से विचार करें तथा उसका दृष्टिकोण वैयक्तिकता से मुक्त हो। भारतीयों के चिन्तन से यह आदर्श भली–भांति चरितार्थ हुआ है। सत्ता संबंधी विभिन्न मतों की स्थिति इस तथ्य को स्पष्ट करती है।[19]

9. व्यावहारिक अनुशासन और पास्परिक सम्बन्ध स्थापना : दर्शन अपनी सिद्धि के लिए व्यावहारिक अनुशासन की उचित शिक्षा का विवरण देता है। इस प्रकार वह जीवन प्रणाली बन जाता है। वह विचार प्रणाली मात्र नहीं रहता।

10. एकता की खोज : जिज्ञासा दो सारणियों में होकर चली है जिसमें बाह्य दृष्टि की आधारभूत सर्वोच्च शक्ति का स्वरूप उद्‌घाटित होता है और दूसरी जिज्ञासा। अन्तर्दृष्टि प्रधान आत्मपरक है जिसमें प्रथम जिज्ञासा के चिन्तनात्मक मूल्यांकन में सुसंयत सहायता मिलती है।

11. ज्ञानों का समाहार : दर्शन समस्त ज्ञानों तथा मानवीय अनुभवों के समाहार का प्रयत्न भी करता है। इस रूप में दार्शनिक सत्य के स्वभाव, जीवन के अर्थ और उद्देश्य, चेतन के उद्‌भव स्तर, परिणाम तथा अन्य शीर्षस्थ समस्याओं के संबंध में बृहतर तथा व्यापकतर दृष्टिकोणों की खोज करता है, पूर्णता पर बल दिया जाता है।[20]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'जीवन–दर्शन' दो शब्दों जीवन और दर्शन के मेल से बना है। जीवन शब्द की उत्पत्ति जीव से हुई है और दर्शन शब्द की उत्पत्ति 'दृश' धातु में 'अण' शब्द से हुई है। वास्तव में जीवन नैसर्गिक सत्य शक्ति है। इसी के बल पर सभी प्राणी और अन्य प्राकृतिक वस्तुएँ सक्रिय और चेतनशील बन पाती हैं। जब तक इस पंचभूत से निर्मित शरीर में चेतना बहती है। तब तक जीवन चलायमान है, इसके बाद मृत्यु जीवन काल सापेक्ष और सापेक्ष होता है। अतएव उसी के अनुरूप उसका स्वरूप भी बदलता रहता है। जीवन को भारतीय व पाश्चात्य विचारकों ने अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है। जीवन की तरह दर्शन भी एक रहस्यमयी शक्ति है। दर्शन से अभिप्राय सूक्ष्म निरीक्षण से है। दर्शन वास्तव में मनुष्य को उसके प्रति सर्वोच्च वांछनीय ध्येय से साक्षात्कार करवाता है। वस्तुतः दर्शन वह शक्ति है जो विविध प्रकार के साहित्य को अमरता प्रदान करती है।

वस्तुतः दर्शन समस्त ज्ञानों तथा समस्त व्यक्तिगत और जातीय अनुभवों को एक पूर्ण प्रणाली में संयुक्त करने के प्रयत्न का प्रतिनिधित्व करता है। हमारे नित्य जीवन में आंशिक अनुभावात्मक सत्यों को वह एक पूर्णता में संगठित करने का प्रयास करता है।

मृणाल पाण्डे : जीवन एवं रचना संसार :

हिन्दी की यशस्वी कथा शिल्पी मृणाल पाण्डे जी का जन्म 26 फरवरी 1946 को मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ में हुआ। इनका पालन–पोषण मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ। इनकी माता जी शिवानी भी एक सुप्रसिद्ध कथाकार रह चुकी है। बचपन पहाड़ी क्षेत्रों में ही व्यतीत हुआ। उनकी माता जी ने एक ओर अपने कर्म, अपने स्वाभिमान, अपने संघर्ष से घर को शक्ति दी, गौरव दिया, दूसरी ओर अपने व्यक्तित्व के सांस्कृतिक आयामों द्वारा अपने साहित्य में नारी पक्ष को उठाया।

उन्हीं के पालन पोषण से ही मृणाल जी को सांस्कृतिक अनुष्ठानों के विविध विधानों का ज्ञान हुआ तथा लोककथाओं की ज्ञाता बनी।

शिक्षा : शिक्षा–यात्रा में मृणाल जी न जाने कितने सुखद और दुखद अनुभव से गुजरी जो उनकी अमूल्य निधि बन गए। 1966 में इन्होंने इलाहाबाद के प्रयाग विश्वविद्यालय से एम॰ए॰ की शिक्षा प्राप्त की। 1972 से 1974 तक वाशिंगटन में 'कारकोरन स्कूल ऑफ आर्ट' से ड्राइंग, डिजाइन, वास्तुकला का विधिवित अध्ययन भी किया क्योंकि चित्रकला, शास्त्रीय संगीत इन्हें बचपन से पसन्द रहा था। सन् 1979 में 'गंधर्व विश्वविद्यालय' में दीपालीनाग तथा श्री वसन्त ठाकरे से संगीत विशारद की शिक्षा प्राप्त की।

व्यवसाय : प्रकृति का नियम है कि जिस व्यक्ति के भाग्य में संघर्ष लिखा होता है, हर वक्त संघर्ष ही करना पड़ता है। पाण्डे जी ने भी व्यवसाय के क्षेत्र में अनेक स्तर पर संघर्ष का सामना किया और इन संघर्षों पर विजय–पताका फहराती हुई हमेशा आगे बढ़ती रही। आरम्भ में इन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय, मध्य प्रदेश के विभिन्न कॉलेजों में पढ़ाने के बाद अमेरिका, यूरोप में भी अध्यापन किया। इसके बाद वह नई दिल्ली में जीजस एंड मेरी कॉलेज में अंग्रेजी की प्राध्यापिका भी रही। 'मौलाना आजाद कॉलेज ऑपफ टैक्नोलॉजी' में भी कुछ समय इन्होंने अध्यापक कार्य किया। इसके पश्चात् वे पत्रकारिता के क्षेत्र में आ गई। कुछ समय तक स्त्रियों की मासिक पत्रिका 'वामा' की सम्पादिका रही। 1992 तक 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' की और फिर 'दैनिक समाचार–पत्र' हिन्दुस्तान की सम्पादिका रही। 'टाइम्स ऑपफ इंडिया' में काफी समय तक हिन्दी साहित्य की कॉलम लेखिका भी रह चुकी है। गत 25 वर्षों से मृणाल जी रेडियो प्रसारण से भी जुड़ी हैं। इन्होंने बी॰बी॰सी॰ प्रसारण सेवा में अतिथि के तौर पर उर्दू और हिन्दी में विभिन्न हस्तियों का साक्षात्कार किया। आकाशवाणी पर इनके अनेक नाटक प्रसारित हो चुके हैं। इन्होंने दूरदर्शन के लिए विभिन्न धारावाहिकों का निर्माण भी

किया—जो इस प्रकार है—

देखो मगर प्यार से	(13 भाग)
चोर निकल के भागा	(नाटक)
अधिकार	(13 भाग)
शक्ति	(जी॰टी॰वी॰)

इन्होंने समय—समय पर प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गाँधी, वी॰पी॰ सिंह तथा नरसिंहा राव आदि से साक्षात्कार भी किए। मृणाल पाण्डे जी विभिन्न बोर्ड व संस्थाओं की सदस्या है और इंडियन विमेन्स प्रैस कार्पोरेशन की अध्यक्षता भी।

हिन्दी के साथ—साथ पाण्डे जी ने अंग्रेजी में भी लिखा। हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवियों की अनेक रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद किया। उन्होंने अंग्रेजी में 'द सब्जेक्ट इज वूमन' नामक पुस्तक लिखी जो महिला विषयक लेखों का संकलन है। इसके अतिरिक्त उनका एक अंग्रेजी उपन्यास 'द डाटर्स डॉटर' भी है। उनके द्वारा रचित नाटक 'जो राम रचि राखा' का अंग्रेजी अनुवाद अंग्रेजी की रंगमंच पत्रिका एनैक्ट में प्रकाशित हुआ है।

सम्मान एवं पुरस्कार : मृणाल पाण्डे जी को समय—समय पर अनेक पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। सन् 1979 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा हिन्दी संस्थान पुरस्कार, सन् 1985 में उग्र स्मृति सम्मान, हरिदत्त शर्मा जयंती पुरस्कार, 1989 में महिला शिरोमणि पुरस्कार प्रदान किए गए। अतः मृणाल पाण्डे जी का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा का धनी है। उन्होंने अंग्रेजी साहित्य पर अध्ययन करने पर भी हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। उन्होंने अपने अधिकांश साहित्य में महिलाओं की समस्या का ही वर्णन किया उनके मन में शोषित और लाचार महिलाओं के प्रति कोमल भावनाएँ है। उनके व्यक्तित्व की मानक रुचियाँ उनके जीवन का अहम हिस्सा है। इनसे पहली मुलाकात में ये बड़ी

सीधी–साधारण सी लगती और धीरे–धीरे इनका प्रभाव गहराता है। वे हमें लपेटते जाती और उनके प्रभाव से बच पाना असंभव रहता है।

मृणाल पाण्डे का रचना संसार :

साहित्य और समाज का अभिन्न संबंध होने के कारण किसी भी साहित्यकार का साहित्य उसके समाज और जीवन के अनुभवों का प्रतिबिम्ब होता है। मृणाल जी के साहित्य के बारे में यह बात बिल्कुल सही है। वे जीवन की सम्पूर्णता की कवयित्री, कथाकार, उपन्यासकार है। वह एक ऐसी लेखिका है जो जीवन में कम से कम किसी भी चीज के लिए राजी नहीं हो सकती। इस मामले में कोई भी वाद, विचार या कोई सामाजिक–रातनीतिक वाड़ा उनके लिए छोटा, बहुत छोटा साबित होगा। बहुमुखी प्रतिभा की धनी मृणाल जी का व्यक्तितव हो या रचनाएँ, उनकी विशेषता यही है कि उनमें बनावट कम से कम है, सहज सादगी ही उसका प्राण है। भारतीय जीवन के अनेक प्रश्न और पीड़ाओं से उपजी उनकी हर रचना एक सीधे–सादे लेकिन संवेदना में गहरे धंसे जागरूक आदमी का संजीदा बयान है। साहित्य का प्रत्येक शब्द प्रतिबद्धता लिए हुए है तथा लेखन में स्थायी प्रतिबद्धता का उन्मेष तभी होता जब लेखक स्वयं प्रतिबद्ध हो तथा उनका मृणाल जी का अपना जीवन अपनी प्रतिबद्धता से अनुचालित, संचालित होता है। वे अपने साहित्य में मानवीय मूल्यों से प्रतिबद्ध रही। उनकी प्रतिबद्धता किसी दल या व्यक्ति विशेष की न होकर आम जनता के प्रति थी। अतः उपन्यास, निबंध, यात्रावृत्त में उनके कार्य को कम करके आंकना 'निहितार्थ' के बिना संभव नहीं। लेखनी और लोहनी को शक्ति धाराओं के समन्वयात्मक प्रतीक मृणाल पाण्डे ने अनेक समस्याओं का वर्णन अपने साहित्य में किया।

उपन्यास–संग्रह :

1. **विरुद्ध**

   हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982

2. **अपनी गवाही**

   राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा॰लि॰, 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

3. **हमको दियो परदेस**

   राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

4. **रास्तों पर भटकते हुए**

   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

5. **पटरंगपुर पुराण**

   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वितीय सं॰–1992

कहानी–संग्रह :

1. **यानी कि एक बात थी**

   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1990

2. **एक नीच ट्रेजडी**

   राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–1989

3. **चार दिन की जवानी तेरी**

   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1995

4. **शब्दबेधी**

   राजकमल प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली

5. दरम्यान

पराग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–1977

6. एक स्त्री का विदागीत

राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

नाटक–संग्रह :

1. चोर निकल के भागा

राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

2. जो राम रचि राखा

राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

निबन्ध–संग्रह :

1. परिधि पर स्त्री

राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1996

2. स्त्री

राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 7/23, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1996

(2) शोध का उद्देश्य :

प्रस्तावित शोध के उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा प्रकट किया जा सकता है–

1. मृणाल पाण्डे जी के जीवन एवं रचना संसार से पाठकों को अवगत करवाना
2. साहित्य जगत के अध्येताओं को जीवन और दर्शन की जानकारी देना।
3. मृणाल पाण्डे की दृष्टि से धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में वास्तविक स्थिति का वर्णन करना।
4. मृणाल पाण्डे की दृष्टि से राजनीति के क्षेत्र में यथार्थ स्थिति का वर्णन करना।
5. मृणाल पाण्डे की दृष्टि से आर्थिक जगत की वास्तविक स्थिति का वर्णन करना।
6. मृणाल पाण्डे के साहित्य के माध्यम से सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्रों पर दृष्टिपात करना।

(3) उपलब्ध साहित्य की समीक्षा :

साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य समाज के अंतः संघर्ष व उतार–चढ़ावों को एक रचनाकार अपनी कृति के माध्यम से चित्रित करता है। साहित्य का मानव–जीवन से चिरन्तन एवं घनिष्ठ संबंध है। साहित्य के द्वारा मानव जीवन के विविध रूपों, घटनाओं, समस्याओं, भावनाओं विचारों व मानदंडों को अभिव्यक्ति मिलती है। साहित्य मानव जीवन सापेक्ष होता है और मानव–जीवन साहित्य से प्रेरित एवं परिचालित होता रहता है। गतिशील व विकासशील मानव जीवन में मानव के दृष्टिकोणों, धारणाओं, विचारों और आदर्शों में अथवा उसके जीवन में समय के साथ–साथ परिवर्तन आना अनिवार्य है। जीवन–दर्शन हालांकि हिन्दी साहित्य में शोध का केन्द्र बिन्दु रहा है। बहुत से शोधार्थियों ने अनेक

लेखकों के जीवन–दर्शन को अपने शोध का आधार बनाकर समाज में आई कुरीतियों पर कटाक्ष किया है। इतना ही नहीं सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक इतिहास के स्वर्णिम पल को अपने साहित्य में वर्णित करने के साथ–साथ उनमें आई गिरावट, पतन, बुराई को भी प्रमुखता से उजागर किया है। साथ ही इनके समाधान का रास्ता भी दिखाया है। आम आदमी का जीवन के प्रति जो दृष्टिकोण जहां केवल अपने और अपने परिवार के लिए होता है, वहीं साहित्यकार का दृष्टिकोण पूरे समाज के लिए होता है, जिसे वह अपनी लेखनी का आधार बनाता है। मृणाल पाण्डे जी की दृष्टि समाज के सभी क्षेत्रों पर एक जागरूक लेखक की तरह पड़ी है। उनके साहित्य में इसकी स्परूट छाप दिखाई देती है और ताज्जुब की बात यह है कि किसी शोधकर्ता का ध्यान इस ओर नहीं किया कि वे उनके जीवन–दर्शन को अपने शोध का विषय चुने।

(4) शोध की विधि :

सर्वप्रथम श्रीलाल शुक्ल के साहित्य को संग्रह करने का प्रयास किया जाएगा। उनके द्वारा रचित 5 उपन्यास संग्रह और 6 कहानी संग्रह, 2 नाटक संग्रह, 2 निबंध संग्रहों को संग्रहित कर उनकी कथावस्तु और मृणाल जी की विचारधारा को समझने का प्रयास किया जाएगा। इसके साथ–साथ मृणाल जी के साहित्य में जीवन–दर्शन की खोज करने के अलावा जीवन–दर्शन से संबंधित अन्य शोध ग्रंथों, पुस्तकों और अन्य साहित्यिक सामग्री का अध्ययन करने और जीवन–दर्शन के विभिन्न पहलुओं को समझकर साहित्य के अध्येताओं और समाज को जानकारी देने का प्रयास किया जाएगा।

(5) अध्ययन की रूपरेखा :

प्रथम अध्याय : विषय प्रवेश

द्वितीय अध्याय : जीवन–दर्शन : सैद्धान्तिक परिचय

तृतीय अध्याय : मृणाल पाण्डे : जीवन और रचना संसार

चतुर्थ अध्याय : मृणाल पाण्डे के साहित्य में धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन–दर्शन

पंचम अध्याय : मृणाल पाण्डे के साहित्य में सामाजिक जीवन–दर्शन

षष्ठ्म अध्याय : मृणाल पाण्डे के साहित्य में राजनीतिक जीवन–दर्शन

सप्तम अध्याय : मृणाल पाण्डे के साहित्य में आर्थिक जीवन–दर्शन

अष्टम अध्याय : मृणाल पाण्डे के साहित्य में साहित्यिक जीवन–दर्शन

नवम् अध्याय : मृणाल पाण्डे के साहित्य में शैलीगत जीवन–दर्शन

उपसंहार

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची

क) आधार–ग्रन्थ

ख) सहायक–ग्रन्थ

ग) कोश–ग्रन्थ

घ) पत्र–पत्रिकाएं

संदर्भ सूची :

1. (सं.) वामन शिव आप्टे, संस्कृत हिंदी कोश, पृ. 408
2. सं. कालिका प्रसाद, वृहत हिन्दी कोश, पृ. 492
3. डॉ. देवराज, दर्शन शास्त्र की रूपरेखा, पृ. 38
4. कॉपर डिक्शनरी ऑफ थॉटस, पृ. 66
5. वाचस्पति गैरोला, भारतीय दर्शन, पृ. 9
6. डॉ. राधकृष्णन, भारतीय दर्शन, पृ. 38
7. डॉ. रमेश गुप्त, भारतेन्दु हरिशचन्द्र : साहित्य और जीवन दशन, पृ. 51
8. वृहत हिन्दी कोश, पृ. 509
9. डॉ. राधाकृष्णन्, भारतीय दर्शन –भाग–1, पृ. 35
10. डॉ॰ आदर्श सक्सेना, हिन्दी के आंचलिक उपन्यास, पृ. 237
11. राजेश्वर गुरु, प्रेमचंद एक अध्ययन, पृ. 268
12. डॉ॰ लक्ष्मीकांत सिन्हा, हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव, पृ. 67
13. डॉ॰ पारसनाथ मिश्र, मार्क्सवाद और उपन्यासकार यशपाल, पृ. 128
14. डॉ॰ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल, जयशंकर प्रसाद वस्तु और कला, पृ. 114
15. रामधरी सिंह 'दिनकर', अर्धनारीश्वर, पृ॰ 105
16. वही, पृ॰ 106
17. डॉ॰ अशोक कुमार, भारतीय दर्शन में मोक्ष चिंतन एक तुलनात्मक अध्ययन, पृ. 16
18. इण्डियन फिलास्फी, पृ. 25
19. वही पृ. 15
20. डॉ॰ धीरेन्द्र पाल सिंह उपनिषद् दर्शन, पृ॰ 129

संदर्भ ग्रन्थ–सूची

क) आधार ग्रन्थ :

उपन्यास–संग्रह :

1. मृणाल पाण्डे : विरुद्ध
   हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली,
   प्रथम संस्करण 1982

2. मृणाल पाण्डे : अपनी गवाही
   राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा॰लि॰,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली

3. मृणाल पाण्डे : हमको दियो परदेस
   राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली

4. मृणाल पाण्डे : रास्तों पर भटकते हुए
   राधकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली

5. मृणाल पाण्डे : पटरंगपुर पुराण
   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली, द्वितीय सं॰–1992

कहानी–संग्रह :

1. मृणाल पाण्डे : यानी कि एक बात थी
राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1990

2. मृणाल पाण्डे : एक नीच ट्रेजडी
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
संस्करण–1989

3. मृणाल पाण्डे : चार दिन की जवानी तेरी
राधकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1995

4. मृणाल पाण्डे : शब्दबेधी
राजकमल प्रकाशन, अंसारी रोड,
दरियागंज, दिल्ली

5. मृणाल पाण्डे : दरम्यान
पराग प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण–1977

6. मृणाल पाण्डे : एक स्त्री का विदागीत
राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली

नाटक–संग्रह :

1. मृणाल पाण्डे : चोर निकल के भागा
   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली
2. मृणाल पाण्डे : जो राम रचि राखा
   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली

निबन्ध–संग्रह :

1. मृणाल पाण्डे : परिधि पर स्त्री
   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1996
2. मृणाल पाण्डे : स्त्री
   राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.,
   7/23, अंसारी रोड, दरियागंज,
   नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1996

सहायक ग्रन्थ :

1. इन्द्रनाथ मदान : निबन्ध और निबन्ध
   बंसल एण्ड कम्पनी, दिल्ली, सन् 1966
2. उमा सिन्हा : यशपाल का जीवन दर्शन और साहित्य
   लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

3. कुंवरपाल सिंह : हिन्दी उपन्यास : सामाजिक चेतना
पाण्डुलिपि प्रकाशन, दिल्ली
संस्करण–1976

4. कुंवरपाल सिंह : साहित्य और राजनीति
भाषा प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण–1981

5. गुलाब राय : भारतीय संस्कृति की रूपरेखा
साहित्य प्रकाशन मंदिर, ग्वालियर,
सन् 1956

6. देवराज : संस्कृति का दार्शनिक अध्ययन
हिन्दी समिति, लखनऊ, सन् 1971

7. देवराज : भारतीय संस्कृति
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ,
सन् 1960

8. द्वारिका प्रसाद सक्सेना : हिन्दी के प्रतिनिधि निबन्धकार
विनोद कुमार मन्दिर, आगरा, सन् 1976

9. नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली
सन् 1973

10. पुष्पपाल सिंह : समकालीन कहानी : युगबोध का सन्दर्भ
आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली–1986

11. बुद्ध प्रकाश : भारतीय धर्म और संस्कृति
मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ

12. मुकुन्द द्विवेदी : हिन्दी उपन्यास : युग चेतना और पाठकीय संवेदना
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण–1976

13. राधकृष्णन : धर्म और समाज
शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–1976

14. राजकिशोर : धर्म, साम्प्रदायिकता और राजनीति
महरौली, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2003

15. विश्वनाथ : साहित्यदर्पण
मोतीलाल, जवाहर नगर, दिल्ली–1911

16. विश्वम्भर नाथ उपाध्याय : समकालीन सिद्धान्त और साहित्य
एवरेस्ट प्रेस दिल्ली–1976

17. शशिभूषण सिंहल : हिन्दी उपन्यास : बदलते प्रतिमान
प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली, 1779

18. शान्ति जोशी : राधाकृष्णन का जीवन–दर्शन
राजकमल प्रकाशन, संस्करण–1963

19. शिव कुमार मिश्र : दर्शन : साहित्य और समाज
वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–1981

20. शिव कुमार शर्मा : हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ
अशोक प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली–1992

21. सत्येन्द्र : लोक साहित्य विज्ञान
शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, 1971

22. सरिता वाशिष्ठ : युगबोध और हिन्दी नाटक
निर्मल पब्लिकेशन्स, शाहदरा, दिल्ली

23. सुध जैन : आधुनिक नारी दशा और दिशाएँ
सूर्य भारती प्रकाशन, दिल्ली, 2001

24. हजारी प्रसाद द्विवेदी : विचार और विर्तक
साहित्य भवन, इलाहाबाद–1961

25. हीरानन्द वात्स्यायन : साहित्य और समाज
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली,
संस्करण–1985

कोश–ग्रन्थ :

1. कालिका प्रसाद : वृहद् हिन्दी कोश
ज्ञानपीठ मण्डल, लि., वाराणसी, 1963

2. धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य कोश
ज्ञानमण्डल लि., वाराणसी–1985

3. नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1973

4. भोलानाथ तिवारी : व्यावहारिक हिन्दी कोश
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली–1985

5. रामकुमार वर्मा : मानक हिन्दी कोश
प्रयाग, प्रथम संस्करण 2019 वि.

6. रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी,
संस्करण–1886

पत्र–पत्रिकाएँ :

1.	आलोचना	:	राजकमल प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, जनवरी–1992
2.	हरिगंध	:	हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़
3.	हंस	:	अक्षर प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली
4.	कल्याण ;हिन्दी संस्कृति अंकद्ध	:	सम्पादक सम्पूर्णानंद, जनवरी 1950, गीता प्रैस, गोरखपुर
5.	ध्र्मयुग	:	1 फरवरी 1987 अंक
6.	जागरण (पाक्षिक)	:	वर्ष–1, अंक–11, फरवरी–1932